Journal Homepage: www.ijarpr.com ISSN: 3049-0103 (Online)

International Journal of Advance Research Publication and Reviews

Vol 03, Issue 10, pp 490-492, October, 2026

जैन दर्शन में अहिंसावाद

डॉ. नाज़नी बेगम

एसोसिएट प्रोफेसर
एम. जी. कॉलेज, गया जी

शोध-सार :

जैन दर्शन की मूल दार्शनिक एवं नैतिक अवधारणाओं में अहिंसा का सर्वोच्च स्थान है। जैन परंपरा में अहिंसा केवल किसी जीव की शारीरिक हत्या या उसे प्रत्यक्ष रूप से कष्ट पहुँचाने से बचने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह मन, वचन और कर्म की शुद्धता तथा प्रत्येक जीव के प्रति करुणा, मैत्री और सम्मान की व्यापक भावना को अभिव्यक्त करती है। जैन दर्शन के अनुसार अनंत जीव इस संसार में विद्यमान हैं और प्रत्येक जीव अपने अस्तित्व तथा आध्यात्मिक उन्नति का अधिकारी है। अतः किसी भी जीव को जानबूझकर पीड़ा पहुँचाना कर्म-बन्धन का कारण माना जाता है। महावीर स्वामी के उपदेशों में अहिंसा को नैतिक अनुशासन और आध्यात्मिक मुक्ति के मार्ग का अनिवार्य आधार माना गया है। जैन आचार-दर्शन में अहिंसा का संबंध अनेकांतवाद, अपरिग्रह, संयम और आत्मशुद्धि से भी गहराई से जुड़ा हुआ है। अहिंसा व्यक्ति के आचरण को नियंत्रित करने के साथ-साथ उसके विचार और दृष्टिकोण को भी प्रभावित करती है। इस दृष्टि से जैन अहिंसावाद एक व्यापक जीवन-दृष्टि प्रस्तुत करता है, जो जीव मात्र के प्रति उत्तरदायित्व और सह-अस्तित्व की भावना को विकसित करती है।

मुख्य शब्द: जैन दर्शन, अहिंसा, अनेकांतवाद, अपरिग्रह, नैतिकता, सह-अस्तित्व।

भूमिका :

अहिंसा का अर्थ है हिंसा का त्याग। जैन धर्म के अनुसार, हर चीज़ में जीव का वास होता है। माना जाता है कि जीव चल और अचल दोनों तरह की चीज़ों में रहते हैं, जैसे पृथ्वी, हवा और पानी। इसलिए, अहिंसा का अर्थ है सभी जीवों के प्रति हिंसा का त्याग करना। संन्यासी इस व्रत का पालन बहुत निष्ठा से करते हैं। हालाँकि, आम लोगों के लिए भी जैन धर्म में दो इंद्रियों वाले जीवों को भी न मारने का निर्देश दिया गया है। अहिंसा केवल मनाही वाला आचरण नहीं है; इसे भावनात्मक आचरण भी माना जा सकता है (सिन्हा, 1988, पृ. 151)। अहिंसा का अर्थ न केवल जीवों के प्रति हिंसा का त्याग करना है, बल्कि उनके प्रति प्रेम व्यक्त करना भी है। अहिंसा का पालन मन, वचन और कर्म से किया जाना चाहिए। हिंसक कार्यों के बारे में सोचना या दूसरों को हिंसक कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करना अहिंसा के सिद्धांत का उल्लंघन है। जैन धर्म के अनुसार, अहिंसा जीवों के प्रति विचारशीलता का परिणाम है। चूँकि सभी जीव समान हैं, इसलिए किसी भी जीव के प्रति हिंसा करना अधर्म है। जैन धर्म मूल्यों में विश्वास करते हैं। जैन धर्म में पंचमहाव्रत की मीमांसा हुई है। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, ये जैनों के पंचमहाव्रत हैं। प्रत्येक जैन इन व्रतों का पालन सतर्कता से करते हैं। वे सम्यक् चरित्र पर अत्यधिक जोर देते हैं। मूल्यों की प्रधानता देने के कारण जैन-धर्म को धर्म की कोटि में रखा जाता है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि इन नैतिक मूल्यों के नियन्त्रण के लिये जैन लोग तीर्थंकर में विश्वास करते हैं। इससे प्रमाणित होता है कि तीर्थंकरों का जैन-धर्म में आदरणीय स्थान है। ईश्वर के लिये जो गुण आवश्यक है वे तीर्थ-कर में ही माने गये हैं। तीर्थंकर ही जैन-धर्म के ईश्वर हैं। जैन धर्म भी अन्य धर्मों की तरह किसी-न-किसी रूप में ईश्वर पर निर्भर करता है। धर्म की प्रगति के लिये आवश्यक है कि उसमें ईश्वर की धारणा लायी जाय। अतः ईश्वर के बिना धर्म सम्भव नहीं है। हथेली पर चक्र वाला हाथ जैन धर्म के अहिंसा व्रत का प्रतीक है। इसके मध्य में लिखा शब्द “अहिंसा” है। यह चक्र धर्मचक्र का प्रतीक है, जो सत्य और अहिंसा के निरंतर पालन के माध्यम से पुनर्जन्म के चक्र को रोकने के संकल्प को दर्शाता है (कोलंबिया एनसाइक्लोपीडिया, छठा संस्करण, 2008) ।

समाज में अहिंसा

समाज को परिभाषित करते हुए मैकाइवर कहते हैं कि समाज सामाजिक संबंधों का बदलता स्वरूप है। यह आपसी जागरूकता ही सामाजिक संबंधों को परिभाषित करती है। समाज का अस्तित्व सामाजिक व्यवहार के कारण है, जो कई मायनों में एक-दूसरे की पहचान से निर्धारित होता है। (मैकाइवर और पेज, 1950, पृ. 06) सामाजिक संबंध समाज-दर-समाज भिन्न होते हैं और इन्हें परिभाषित करना जटिल है। जैसे माता-पिता और बच्चे का संबंध, शिक्षक और छात्र का संबंध, ये कुछ उदाहरण हैं। 'सामाजिक' की अवधारणा तब सामने आती है जब हम असंख्य शब्दों का अवलोकन करते हैं। हमारी भाषा मनुष्यों के बीच अनेक प्रकार के सामाजिक संबंधों को नाम देने के लिए इन शब्दों का उपयोग करती है। (मैकाइवर और पेज, 1950, पृ. 06) अधिकांश सामाजिक संबंधों में एक सिद्धांत निहित होता है, अर्थात् "सामुदायिक भावना या एक साथ होने का भाव"। समाजशास्त्रियों ने उन परिस्थितियों का अध्ययन किया है जो मनुष्यों को एकजुट करती हैं और जो उन्हें विभाजित करती हैं। हालांकि, यदि सामुदायिक भावना न हो, मनुष्यों द्वारा कोई सहयोगात्मक कार्य न हो, तो कोई सामाजिक व्यवस्था नहीं होगी, कोई समाज या समाज नहीं होंगे, और समाजशास्त्रियों के अध्ययन के लिए कुछ भी नहीं होगा। इसलिए, समाजशास्त्र के लिए केंद्रीय संबंध वे हैं जिनमें साझा की गई कोई बात शामिल होती है और महत्वपूर्ण रूप से पारस्परिक मान्यता शामिल होती है। (मैकिवर और पेज, 1950, पृष्ठ 08-09)

जैन धर्म के दृष्टिकोण से अहिंसा

विश्व के सभी प्रमुख धर्मों में जैन धर्म ने अहिंसा पर सबसे अधिक बल दिया है। जैन धर्म विश्व का पहला ऐसा धर्म है जिसने अहिंसा के सिद्धांतों को अपनी शिक्षाओं के एक भाग के रूप में समाहित किया। मुक्ति का मार्ग सही ज्ञान, आस्था और आचरण से होकर गुजरता है। जैन धर्म के अनुसार, सही आचरण पाँच प्रमुख गुणों (पंचमहाव्रत) पर आधारित है, अर्थात् अहिंसा, सत्य, अष्टे, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह (जैनी, 1998, पृ. 177)। उनके लिए, अहिंसा एक महत्वपूर्ण प्रमुख गुण है और इसे सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। अहिंसा जैन आचार संहिता का मुख्य स्तंभ है, जो तर्कवाद का स्वाभाविक परिणाम है। जैन धर्म का मानना है कि कोई सर्वोच्च सत्ता नहीं है जो कानूनों या आदेशों की प्रणाली निर्धारित करती हो। जैन धर्म शास्त्रों के अध्ययन और तर्कसंगत बोध, ज्ञान और आचरण की अवधारणाओं को समझने की अपेक्षा रखता है। वे चाहते हैं कि व्यक्ति अपने जीवन के अनुभवों के माध्यम से यह समझें कि क्रोध, अहंकार, छल और लोभ जैसी भावनाओं का उनके जीवन पर गहरा नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। यह देखा गया है कि यदि व्यक्ति सफलता और असफलता, उत्थान और पतन, बीमारी और स्वास्थ्य, एकता और वियोग को सांसारिक जीवन का हिस्सा मान लेता है, तो उसकी भावनाएँ सौम्य हो जाती हैं। इससे मन को संतोष और शांति मिलती है। स्वस्थ रहना और मन की शांति ही अहिंसा के गुण का आधार है।

जैन धर्म सिखाता है कि झूठ बोलना, चोरी करना, लोभ, भोगवाद और अधिकार भावना हिंसा के पहलू हैं। इन सभी में वासना, स्वयं और दूसरों के प्रति मानसिक हिंसा शामिल है। ये शारीरिक हिंसा का कारण भी बन सकते हैं। ए. एन. उपाध्याय ने कहा: "जैन धर्म संभवतः एकमात्र भारतीय धर्म है जिसने अहिंसा के सिद्धांत को सुव्यवस्थित रूप से समझाया है, क्योंकि यह अन्य सभी मूल्यों का आधार है। हिंसा या चोट तीन प्रकार की होती है: शारीरिक हिंसा, जो हत्या, घाव और किसी भी प्रकार की शारीरिक पीड़ा पहुँचाने से संबंधित है; शाब्दिक हिंसा, जिसमें कठोर भाषा का प्रयोग शामिल है; और मानसिक हिंसा, जिसका अर्थ है दूसरों के प्रति दुर्भावना रखना" (उपाध्ये, 1964, पृष्ठ 101)।

गांधी जी के अनुसार, "सच्ची अहिंसा वचन, कर्म और विचार में अहिंसा होनी चाहिए। अहिंसा के प्रति सच्ची प्रतिबद्धता किसी के प्रति कोई द्वेष नहीं रखती और ऐसे शब्दों का प्रयोग करने से बचती है जो किसी विरोधी के शरीर या मन को ठेस पहुंचा सकें। वास्तव में, उनके धर्म के पहले और अंतिम सिद्धांत अहिंसा ही थे" (हरिजन, 1935, पृष्ठ (180। इस प्रकार उनकी अहिंसा ने नवीनता और विशिष्टता प्राप्त कर ली। बुराइयों और शोषण को समाप्त करने और न्याय एवं शांति स्थापित करने के लिए, उन्होंने इस सिद्धांत को दृढ़ नैतिक विश्वास के साथ सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्र में लागू किया। दुनिया में कोई और धर्म अहिंसा को जितनी गहराई और स्पष्टता से नहीं समझाता जितना कि जैन धर्म करता है। जैन धर्म हमें सिखाता है कि हमारे जीवन के हर हिस्से में दयालु और कोमल कैसे रहें। जब दुनिया भर के लोग खुशी पाने के लिए और मृत्यु के बाद भी दया और अहिंसा का उपयोग करते हैं, तो जैन धर्म को बहुत महत्वपूर्ण माना जाता है। भगवान महावीर को अहिंसा के सबसे महान शिक्षक के रूप में देखा जाता है (पांडे, 1998, पृ.335)।

जैन दर्शन में इस बात पर बल दिया गया कि सही आचरण से ज्ञान को पूर्णता प्राप्त की जा सकती है। सही आचरण के बिना ज्ञान निरर्थक है और सही ज्ञान के बिना आचरण अंधा है। जैनियों का कहना था कि व्यक्ति अपनी भावनाओं को वश में करके स्वयं पर पूर्ण विजय प्राप्त कर सकता है। मुक्ति अनुष्ठानों, प्रार्थनाओं और यज्ञों के पालन से नहीं, बल्कि नैतिक और आध्यात्मिक अनुशासन के पालन से प्राप्त होती है। इसी कारण उन्होंने पाँच व्रतों को अत्यधिक महत्व दिया -अहिंसा, सत्य, चोरी न करना जिसका अर्थ है किसी भी ऐसी वस्तु को न लेना जिस पर आपका अधिकार न हो अष्टे, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। इन सिद्धांतों में अहिंसा को सर्वोच्च महत्व दिया गया (दामोदर, 1967, पृष्ठ, 128) ।

जैन धर्म मानता है कि हिंसा से व्यक्तियों या समाज का कोई समग्र कल्याण नहीं हो सकता। जैन धर्म सिखाता है कि असत्य, चोरी, अपने हिस्से से अधिक लेना, इंद्रिय सुखों की अतृप्त खोज और अधिकार भावना हिंसा के पहलू हैं। इन सभी में वासनाएँ, मानसिक हिंसा और स्वयं तथा दूसरों की हिंसा शामिल है। डेल रीपे कहते हैं :"जैन धर्म की नैतिकता प्रकृतिवादी है क्योंकि यह मानवतावादी है। जैन मोक्ष प्राप्त करने के लिए किसी अलौकिक मुक्ति या हस्तक्षेप पर निर्भर नहीं करता। वह मनुष्य के रूप में अपनी स्वयं की शक्तियों के आधार पर आनंद का अनुभव करता है (डेल, 1961, पृष्ठ, 114) ।

जैन धर्म की आचार संहिता का आधार अहिंसा है, जो तर्कवाद का स्वाभाविक परिणाम है। जैन धर्म में यह मान्यता नहीं है कि कोई उच्च सत्ता 'कानूनों की प्रणाली' या आदेश प्रदान करती है। जैन धर्म में शास्त्रों का अध्ययन करना और तर्कसंगत बोध, तर्कसंगत ज्ञान और तर्कसंगत आचरण की अवधारणाओं को समझना अपेक्षित है। उन्हें अपने अनुभवों पर विचार करना चाहिए और यह समझना चाहिए कि क्रोध, अहंकार, छल और लोभ जैसी भावनाओं का उनके जीवन पर गहरा प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। यह देखा गया है कि यदि कोई व्यक्ति सफलता और असफलता, सुख और दुख, रोग और स्वास्थ्य, मिलन और वियोग, विजय और पराजय को सांसारिक अस्तित्व का हिस्सा मान लेता है, तो उसकी भावनाएं सौम्य हो जाती हैं। इससे संतोष और मन की शांति प्राप्त होती है। जिस प्रकार हम अच्छे स्वास्थ्य और मन की शांति की कामना करते हैं, उसी प्रकार सभी जीव भी करते हैं। यही अहिंसा के गुण का आधार है।

नैतिकता का पालन केवल शारीरिक क्रियाओं के माध्यम से ही नहीं, बल्कि मौखिक क्रियाओं और विचारों के माध्यम से भी किया जाता है। अतः अहिंसा का पालन मन, वाणी और शरीर तीनों से करना आवश्यक है। संन्यासियों और गृहस्थों के अन्य नियम इन्हीं पाँच प्रमुख व्रतों से निकाले गए हैं। जैन धर्म नैतिक आचरण के लिए ईश्वर के भय को कारण नहीं मानता। नैतिक संहिता का पालन केवल इसलिए आवश्यक नहीं है क्योंकि यह किसी ईश्वर या अन्य सर्वोच्च सत्ता का आदेश है। न ही इसका पालन केवल इसलिए आवश्यक है क्योंकि यह राज्य या समुदाय के सामान्य कल्याण के लिए सहायक है। यह सत्य है कि जैन धर्म में नैतिक और धार्मिक आदेशों को अर्हतों द्वारा विधि के रूप में स्थापित किया गया था, जिन्होंने अपने सर्वोच्च नैतिक प्रयासों से पूर्णता प्राप्त की थी, लेकिन उनका पालन केवल ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए नहीं था। अर्हतों के जीवन ने यह दर्शाया है कि ये आदेश अर्हतों के स्वयं के कल्याण के लिए सहायक थे, जिससे उन्हें आध्यात्मिक विजय प्राप्त करने में सहायता मिली। जिस प्रकार अर्हतों ने नैतिक संहिता का पालन करके मोक्ष या मुक्ति प्राप्त की, उसी प्रकार इस मार्ग का अनुसरण करने वाला कोई भी व्यक्ति इसे प्राप्त कर सकता है।

ऊपर बताए गए कार्यों को अपनाकर, मनुष्य मोक्ष का अनुभव करने के योग्य बन जाता है। कर्म पर निर्भरता खत्म हो जाती है और पिछले कर्म नष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार, आत्मा अपनी स्वाभाविक अवस्था को प्राप्त कर लेती है। यही मोक्ष है। मोक्ष का अर्थ केवल दुखों का नाश नहीं है, बल्कि आत्मा के शाश्वत चार गुणों को प्राप्त करना भी है: अनंत ज्ञान, अनंत शक्ति, अनंत दृष्टि और अनंत आनंद। इस प्रकार, जैन धर्म मोक्ष की व्याख्या एक गैर-अनिवार्य और भावनात्मक तरीके से करता है। जैसे पृथ्वी के हट जाने पर आकाश में सूर्य चमकता है, वैसे ही मोक्ष की अवस्था में आत्मा अपनी पूर्णता को पुनः प्राप्त कर लेती है।

जैन धर्म सिखाता है कि सभी जीवित प्राणियों के प्रति दयालु और कोमल होना चाहिए, न कि केवल मनुष्यों के लिए बल्कि जानवरों, पौधों, छोटे कीड़ों और किसी भी जीवित वस्तु के लिए भी। हर जीव विशेष है और खुशहाल और सुरक्षित जीवन जीने का अधिकार रखता है। जो लोग दूसरों को नुकसान न पहुंचाने का वादा करते हैं, उन्हें डरने की जरूरत नहीं है। जैन धर्म के अनुसार, जीवन की रक्षा, जिसे अभयदानम भी कहा जाता है , वह

सर्वोच्च दान है जो एक व्यक्ति कर सकता है (वर्णी 1993 , पृ. 335) । जैन धर्म के अनुसार, सत्य का अंतिम मानदंड, या सत्य को व्यक्त करने के लिए नैतिक औचित्य की आवश्यकता के दूसरे मत के अनुसार, अहिंसा के संदर्भ में व्यावहारिक परिणामों में निहित है।

निष्कर्ष

जैन धर्म में अहिंसा को सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह जैसे अन्य व्रतों के साथ जोड़कर देखा जाता है। अहिंसा का पालन मनुष्य में आत्मसंयम, सहिष्णुता, नैतिकता और विश्वबंधुत्व की भावना विकसित करता है। यह सिद्धांत न केवल व्यक्तिगत जीवन को शुद्ध बनाता है, बल्कि समाज में शांति, सद्भाव और सह-अस्तित्व की स्थापना में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में हिंसा, युद्ध, धार्मिक एवं सामाजिक असहिष्णुता, पर्यावरणीय संकट तथा जीव-जंतुओं के प्रति बढ़ती संवेदनहीनता जैसी समस्याओं के संदर्भ में जैन अहिंसावाद की प्रासंगिकता विशेष रूप से महत्वपूर्ण हो जाती है। प्रस्तुत पत्र का उद्देश्य जैन दर्शन में अहिंसा की अवधारणा, उसके दार्शनिक एवं नैतिक आधार तथा समकालीन मानव जीवन में उसकी प्रासंगिकता का विश्लेषण करना है। यह अध्ययन इस बात को रेखांकित करता है कि जैन अहिंसा केवल एक धार्मिक सिद्धांत नहीं, बल्कि शांतिपूर्ण, सह-अस्तित्वपूर्ण और उत्तरदायी समाज के निर्माण की महत्वपूर्ण दार्शनिक आधार भूमि भी प्रदान करती है।

संदर्भ:

- Sinha, H. P. (2012). *Bharatiya Darshan Ki Rooprekha*, Motilal Banarsidass.
- The Columbia Encyclopedia, (2008) sixth Edition.
- Maciver and Page (1950) *Society: An Introductory Analysis,* Macmillan, Delhi
- Jaini, P. S. (1998) *The Jaina path of purification,*Motilal Banarsidass Publisher.
- Upadhye, A.N., (1964) *Jainism included in 'A critical History of India.*
- Harijan, July 1935, vol.III, No. 23.
- Pandey, Janardan (1998), *Gandhi and 21st Century,* Concept Publishing Company.
- Damodaran, K.,(1967) *Indian Thought. A critical Survey*, Asian publication house.
- Dale M.P.(1961) *The Naturalistic Tradition in Indian Thought*, University of Washington Press.
- वर्णी, जिनेंद्र) 1993), जैन, सागरमल) सं(., समन सुत्तम , तुकोल, टीके द्वारा अनुवादित; दीक्षित, केके, नई दिल्ली :भगवान महावीर स्मारक समिति
- Bhargava D. (1968) *Jain Ethics* Moti Lal Banarsi Dass New Delhi.
- Hiriyanna M. (1968) *Outlines of Indian philosophy.* George Allen and Unwin, London.